नईदुनिया

संपादकीय

भारतीय आईटी पेशेवरों के लिए न्याय और अवसर

अमेरिका की एक संघीय अदालत ने डोनाल्ड ट्रंप प्रशासन द्वारा नए एच-1बी वीजा आवेदकों पर लगाए गए एक लाख डॉलर यानी लगभग 85 लाख रुपये के अतिरिक्त शुल्क को गैरकानूनी करार देकर रद्द कर दिया है। यह फैसला केवल कानूनी जीत नहीं, बल्कि योग्यता और श्रम की गरिमा की भी जीत है। अदालत ने स्पष्ट किया कि राष्ट्रपति के पास कांग्रेस की मंजूरी के बिना इस प्रकार का कर लगाने का अधिकार नहीं है। कर लगाने की शक्ति केवल विधायिका के पास होती है। यह निर्णय अमेरिकी संविधान की मूल भावना और शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत की पुष्टि करता है।

इस फैसले से अमेरिका में अपने कौशल के बल पर करियर बनाने का सपना देखने वाले हजारों भारतीय आईटी पेशेवरों को बड़ी राहत मिली है। एच-1बी वीजा अमेरिका की तकनीकी अर्थव्यवस्था की रीढ़ माना जाता है। सिलिकॉन वैली से लेकर न्यूयॉर्क तक अनेक बड़ी टेक कंपनियां भारतीय इंजीनियरों, डेटा वैज्ञानिकों और सॉफ्टवेयर विशेषज्ञों पर निर्भर हैं। भारतीय पेशेवर न केवल नवाचार को गति देते हैं, बल्कि अमेरिका की प्रतिस्पर्धात्मकता भी मजबूत करते हैं। ऐसे में एक लाख डॉलर का अतिरिक्त शुल्क प्रतिभा के प्रवाह पर अप्रत्यक्ष रोक के समान था।

इस निर्णय का पहला आयाम संवैधानिक है। अदालत ने याद दिलाया कि लोकतंत्र में कर लगाने की शक्ति जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों के पास होती है। दूसरा आयाम आर्थिक है। अमेरिकी अर्थव्यवस्था को कुशल श्रम की निरंतर आवश्यकता है। तकनीक के विस्तार के साथ स्वास्थ्य, शिक्षा, वित्त और विनिर्माण जैसे क्षेत्रों में भी सॉफ्टवेयर और कृत्रिम बुद्धिमत्ता की मांग बढ़ी है। यदि वीजा प्रक्रिया अत्यधिक महंगी और जटिल होगी तो कंपनियां नवाचार की गति खो देंगी या परियोजनाएं दूसरे देशों में स्थानांतरित करेंगी।

तीसरा आयाम मानवीय है। हर एच-1बी आवेदक के पीछे वर्षों की मेहनत और एक परिवार के सपने जुड़े होते हैं। इतना भारी शुल्क प्रतिभा की जगह आर्थिक क्षमता को निर्णायक बना देता। यह उस अमेरिकी आदर्श के विपरीत है, जो मेहनत और योग्यता को सफलता का आधार मानता है। भारत और अमेरिका की रणनीतिक साझेदारी में आईटी पेशेवर महत्वपूर्ण सेतु हैं। इसलिए वीजा नीति में अनावश्यक बाधाएं दोनों देशों के साझा हितों के विरुद्ध हैं।

एच-1बी वीजा के दुरुपयोग और स्थानीय रोजगार पर प्रभाव जैसी चिंताओं से इनकार नहीं किया जा सकता, लेकिन उनका समाधान अतिरिक्त कर नहीं, बल्कि बेहतर निगरानी, पारदर्शिता और श्रम नियमों के कड़ाई से पालन में है। भारत सरकार और उद्योग जगत को इस अवसर का उपयोग करते हुए अमेरिका के साथ संवाद बढ़ाना चाहिए और देश में भी अनुसंधान, नवाचार तथा उच्च गुणवत्ता वाले रोजगार के अवसर सृजित करने चाहिए। अंतत: यह फैसला कानून, प्रतिभा और वैश्विक सहयोग की जीत है, जो बताता है कि अवसर मिलने पर ही प्रतिभा दुनिया को आगे बढ़ाती है।

ओबामा का समझौता रद्द कर ट्रंप को आखिर मिला क्या?

समझौते की मेज़ पर झुका अमेरिका, मजबूत होकर उभरा ईरान

अपूर्व तिवारी

दुनिया की राजनीति में कई बार फैसले ताकत के दम पर नहीं, बल्कि परिस्थितियों की मजबूरी में लिए जाते हैं। अमेरिका और ईरान के बीच सामने आया नया समझौता भी कुछ ऐसा ही संकेत देता है। जिस डोनाल्ड ट्रंप ने 2015 में बराक ओबामा के परमाणु समझौते को अमेरिका के इतिहास का सबसे खराब समझौता बताया था, वही आज ईरान के साथ फिर बातचीत और समझौते के रास्ते पर हैं। फर्क सिर्फ इतना है कि इस बीच दुनिया ने युद्ध देखा, अरबों डॉलर खर्च हुए, तेल बाजार हिल गया और वैश्विक अर्थव्यवस्था को भारी नुकसान उठाना पड़ा। ऐसे में सबसे बड़ा सवाल यही है कि आखिर ओबामा का समझौता तोड़कर और युद्ध का रास्ता अपनाकर अमेरिका को मिला क्या?

2015 में ओबामा प्रशासन ने ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, रूस और चीन के साथ मिलकर ईरान के साथ परमाणु समझौता किया था। इस समझौते में ईरान को केवल सीमित स्तर तक यूरेनियम संवर्धन की अनुमति थी। उसके संवर्धित यूरेनियम के भंडार की सीमा तय कर दी गई थी और अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी को उसके परमाणु ठिकानों की नियमित जांच का अधिकार मिला था। बदले में ईरान पर लगे आर्थिक प्रतिबंध धीरे-धीरे हटाए जाने थे। उस समय दुनिया ने इसे पश्चिम एशिया में स्थिरता की दिशा में बड़ा कदम माना था।

लेकिन ट्रंप इस समझौते से संतुष्ट नहीं थे। उनका तर्क था कि इसमें ईरान के बैलिस्टिक मिसाइल कार्यक्रम पर कोई रोक नहीं है, समझौते की समय सीमा सीमित है और प्रतिबंध हटने से ईरान को आर्थिक ताकत मिलेगी, जिसका इस्तेमाल वह अपने क्षेत्रीय प्रभाव को बढ़ाने में करेगा। इसी सोच के कारण उन्होंने अमेरिका को इस समझौते से बाहर निकाल लिया और ईरान पर पहले से कहीं ज्यादा कड़े आर्थिक प्रतिबंध लगा दिए।

ट्रंप का मानना था कि अधिक दबाव डालकर ईरान से ज्यादा सख्त शर्तें मनवाई जा सकती हैं। लेकिन बीते वर्षों की घटनाओं ने यह साबित कर दिया कि केवल आर्थिक प्रतिबंध किसी देश की नीति नहीं बदल सकते। उलटे तनाव बढ़ा, टकराव गहरा हुआ और अंतत: युद्ध की स्थिति बन गई। अब जब नया प्रारंभिक समझौता सामने आया है तो उसमें कई ऐसे मुद्दे हैं जिन पर अभी भी स्पष्टता नहीं है।

ओबामा के समझौते में यूरेनियम संवर्धन की सीमा तय थी, परमाणु सामग्री के भंडार पर नियंत्रण था और अंतरराष्ट्रीय निरीक्षण की मजबूत व्यवस्था थी। इसके विपरीत मौजूदा प्रारंभिक समझौते में ईरान ने केवल परमाणु हथियार नहीं बनाने की बात दोहराई है, लेकिन यूरेनियम संवर्धन कितना होगा, निरीक्षण कैसे होगा और परमाणु सामग्री का भंडार कितना रहेगा, इन अहम सवालों को आगे की बातचीत पर छोड़ दिया गया है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि लंबी दूरी की बैलिस्टिक मिसाइलों पर भी कोई स्पष्ट और कठोर शर्त अभी सामने नहीं आई है, जबकि ट्रंप प्रशासन इन्हें हमेशा सबसे बड़ा खतरा बताता रहा है।

इसके विपरीत नए समझौते में आर्थिक रियायतों पर ज्यादा जोर दिखाई देता है। ईरान पर लगे प्रतिबंध हटाने, उसकी रुकी हुई संपत्तियां उपलब्ध कराने और उसके पुनर्निर्माण के लिए बड़े निवेश की बात की जा रही है। यही कारण है कि कई विश्लेषक मान रहे हैं कि यदि अंतिम समझौते में परमाणु कार्यक्रम और मिसाइलों पर पहले से ज्यादा कड़ी शर्तें नहीं जुड़तीं तो यह कहना मुश्किल होगा कि ट्रंप का समझौता ओबामा के समझौते से बेहतर है। इस पूरे घटनाक्रम में होर्मुज जलडमरूमध्य सबसे बड़ा मोड़ बनकर उभरा। दुनिया के लगभग पांचवें हिस्से का तेल इसी समुद्री रास्ते से गुजरता है। जब यहां संकट पैदा हुआ तो तेल की कीमतों में तेजी आ गई, समुद्री बीमा महंगा हो गया और वैश्विक बाजारों में घबराहट फैल गई। ऊर्जा आयात पर निर्भर देशों की अर्थव्यवस्था पर इसका सीधा असर पड़ा। इससे यह भी साबित हुआ कि पश्चिम एशिया में स्थिरता केवल क्षेत्रीय नहीं, बल्कि वैश्विक जरूरत है।

युद्ध की कीमत भी कम नहीं रही। विभिन्न शुरुआती आकलनों के अनुसार अमेरिका को इस सैन्य अभियान पर प्रत्यक्ष रूप से दर्जनों अरब डॉलर खर्च करने पड़े और रक्षा बजट पर अतिरिक्त दबाव बढ़ा। दूसरी ओर तेल की बढ़ती कीमतों, समुद्री व्यापार में रुकावट, बीमा लागत में वृद्धि और निवेशकों की अनिश्चितता के कारण पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था को भारी नुकसान हुआ। कई अर्थशास्त्रियों का मानना है कि यदि यह संकट लंबा खिंचता तो वैश्विक अर्थव्यवस्था को खरबों डॉलर का झटका लग सकता था। युद्ध का सबसे बड़ा नुकसान हमेशा आम लोगों को होता है और इस बार भी वही हुआ। यहीं ट्रंप की नीति पर सबसे बड़ा सवाल खड़ा होता है। जिस समझौते को उन्होंने कमजोर बताकर खत्म किया, उसके बाद अमेरिका ने वर्षों तक प्रतिबंध लगाए, सैन्य अभियान चलाया और अरबों डॉलर खर्च किए। अंत में उसे फिर बातचीत, प्रतिबंधों में राहत और आर्थिक सहयोग के रास्ते पर लौटना पड़ा। यदि अंतिम समझौते में यूरेनियम संवर्धन, अंतरराष्ट्रीय निगरानी, लंबी दूरी की मिसाइलों और क्षेत्रीय सुरक्षा पर पहले से ज्यादा मजबूत प्रावधान नहीं बनते तो इतिहास यह सवाल जरूर पूछेगा कि ओबामा के समझौते को खत्म करके अमेरिका ने वास्तव में क्या हासिल किया।

भारत के लिए भी यह पूरा घटनाक्रम बेहद महत्वपूर्ण है। भारत अपनी ऊर्जा जरूरतों का बड़ा हिस्सा पश्चिम एशिया से पूरा करता है। यदि क्षेत्र में शांति रहती है तो तेल की कीमतें नियंत्रित रहेंगी, महंगाई कम होगी और आर्थिक विकास को गति मिलेगी। लेकिन यदि तनाव फिर बढ़ा तो इसका असर सीधे भारतीय अर्थव्यवस्था और आम उपभोक्ता की जेब पर पड़ेगा।

अंतरराष्ट्रीय राजनीति का सबसे बड़ा सच यही है कि वहां स्थायी दोस्त या दुश्मन नहीं होते, केवल स्थायी हित होते हैं। परिस्थितियां बदलती हैं तो नीतियां भी बदल जाती हैं। अमेरिका और ईरान के बीच चल रही नई पहल इसी सच्चाई का प्रमाण है। लेकिन यह भी उतना ही सच है कि युद्ध किसी भी समस्या का स्थायी समाधान नहीं देता। यदि अंत में बातचीत की मेज पर ही लौटना पड़ता है तो यह सवाल हमेशा बना रहेगा कि बीच का संघर्ष, आर्थिक नुकसान और हजारों करोड़ डॉलर का खर्च आखिर किसलिए था।

आज दुनिया महंगाई, आर्थिक अनिश्चितता और ऊर्जा संकट जैसी चुनौतियों से जूझ रही है। ऐसे समय में किसी भी युद्ध की कीमत केवल सैनिक नहीं चुकाते, बल्कि पूरी मानवता चुकाती है। इसलिए अमेरिका और ईरान के बीच बनने वाला अंतिम समझौता केवल दो देशों के रिश्तों का दस्तावेज नहीं होगा, बल्कि यह भी तय करेगा कि भविष्य की दुनिया टकराव के रास्ते पर चलेगी या संवाद और समझदारी के रास्ते पर। अगर इतिहास से सबक लिया गया तो शायद आने वाले समय में हथियारों की जगह बातचीत ज्यादा मजबूत साबित होगी।

आजकल

नीट परीक्षा की निष्पक्षता पर सवाल

सरकार के प्रयास और शातिरों की सेंधमारी

नीट यूजी 21 जून को आयोजित होने जा रही है और प्रशासन पूरी तरह हाई अलर्ट पर है। प्रदेश के सभी परीक्षा केंद्रों पर सीसीटीवी कैमरे और जैमर लगाए जा रहे हैं। हर केंद्र के बाहर बड़ी घड़ी लगाई जाएगी तथा डॉक्टर भी तैनात रहेंगे। भोपाल में 13,774 छात्र परीक्षा देंगे। कलेक्टर ने 32 केंद्र प्रभारियों के साथ बैठक कर यातायात, सुरक्षा और अन्य व्यवस्थाओं की समीक्षा की है। इन तैयारियों से स्पष्ट है कि परीक्षा को निष्पक्ष और व्यवस्थित बनाने का हर संभव प्रयास किया जा रहा है, लेकिन सवाल यही है कि क्या इतने इंतजामों के बाद भी परीक्षा पूरी तरह निष्पक्ष हो पाएगी।

सीसीटीवी कैमरे और जैमर नकल तथा पेपर लीक जैसी पारंपरिक धांधलियों पर रोक लगाने के प्रभावी साधन हैं। जैमर मोबाइल संचार बाधित करते हैं और कैमरे हर गतिविधि रिकॉर्ड करते हैं। पिछले वर्षों में पेपर लीक, सॉल्वर गैंग और फर्जी केंद्रों के मामलों ने परीक्षा प्रणाली की विश्वसनीयता पर गंभीर प्रश्न खड़े किए थे। इन्हीं अनुभवों से सीख लेकर इस बार सुरक्षा व्यवस्था को और मजबूत किया गया है। फिर भी कोई भी व्यवस्था पूरी तरह त्रुटिहीन नहीं होती। इतने बड़े स्तर पर एक छोटी सी चूक भी पूरे सिस्टम की साख को नुकसान पहुंचा सकती है। आज पेपर लीक के तरीके भी बदल चुके हैं और डिजिटल माध्यमों के जरिए नए खतरे सामने आ रहे हैं। इसलिए केवल परीक्षा केंद्रों की निगरानी पर्याप्त नहीं, बल्कि पूरी प्रक्रिया पर सतत नजर रखना जरूरी है।

परीक्षा की निष्पक्षता केवल नियमों और तकनीकी साधनों से नहीं, बल्कि छात्रों और अभिभावकों के विश्वास से तय होती है। लाखों युवाओं का भविष्य इस परीक्षा पर निर्भर करता है। इसलिए प्रशासन को पारदर्शिता, जवाबदेही और त्वरित शिकायत निवारण व्यवस्था भी सुनिश्चित करनी होगी। प्रश्नपत्र तैयार होने से लेकर परिणाम घोषित होने तक हर स्तर पर सख्त निगरानी और नियमित ऑडिट आवश्यक हैं। दोषियों पर तत्काल और कठोर कार्रवाई ही व्यवस्था में भरोसा कायम रख सकती है। परीक्षा की सफलता केवल शांतिपूर्ण आयोजन से नहीं, बल्कि उसकी निष्पक्षता पर जनता के विश्वास से तय होगी।

पद नहीं, परफॉर्मेंस - संगठन की दो टूक, अब काम चाहिए

पद प्रतिष्ठा नहीं, परीक्षा है। भाजपा का संगठनात्मक ढांचा उसकी सबसे बड़ी ताकत है, परंतु ताकत तभी तक है जब तक कार्यकर्ता सक्रिय है। मंडल और जिला अध्यक्षों को समझना होगा कि पद विजिटिंग कार्ड नहीं, रिपोर्ट कार्ड है। हर महीने काम का हिसाब देना होगा।

मुख्यमंत्री की दो टूक समय की मांग है। 2023-24 की जीत इतिहास है, 2028 भविष्य है और भविष्य उन्हीं का होता है जो वर्तमान में जागते हैं। संगठन ने पद दे दिए हैं, अब जनता परिणाम मांगेगी। कार्यकर्ता अगर जमीन पर नहीं दिखे तो पद भी नहीं बचेगा, क्योंकि भाजपा में काम ही एकमात्र पहचान है और 2028 का चुनाव इसी पहचान पर लड़ा जाएगा।

राजनीति में पद मिलना जितना आसान है, उसे निभाना उतना ही कठिन है। मध्यप्रदेश भाजपा ने मंडल व जिला प्रशिक्षण वर्ग की समीक्षा में यही संदेश दिया है। पद मिल गए हैं, अब काम दिखाने का समय है। लक्ष्य अगला चुनाव है। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव से लेकर प्रदेश अध्यक्ष हेमंत खंडेलवाल तक ने कार्यकर्ताओं को दो टूक कहा कि सर्वाधिक सीटें जीतकर फिर से सरकार बनानी है, परंतु यह तभी संभव होगा जब हर कार्यकर्ता पद को अधिकार नहीं, जिम्मेदारी माने। संगठन ने साफ कर दिया है कि अब निष्ठा का प्रमाणपत्र नहीं, जमीन पर परिणाम चाहिए।

समीक्षा की सख्ती, प्रशिक्षण के बाद टेस्ट शुरू-भोपाल में मंडल व जिला प्रशिक्षण वर्ग की समीक्षा बैठक में प्रशिक्षण के शुभारंभ पर भाजपा के सिद्धांतों और उन्हें आचरण में उतारने की बात कही गई। लगभग 80 प्रतिशत मंडल व जिला स्तर पर प्रशिक्षण पूरे हो चुके हैं। अब संगठन अगले चरण में है, यानी कार्य का ऑडिट। मुख्यमंत्री ने कहा कि कार्यकर्ताओं को पद दिए गए हैं तो अब उन्हें काम दिखाना होगा और सभी का लक्ष्य पार्टी को मजबूत बनाना तथा प्रदेश में आने वाले समय में प्रस्तावित चुनाव होना चाहिए।

यह संदेश सामान्य नहीं है। 2023 विधानसभा और 2024 लोकसभा में भाजपा ने मध्यप्रदेश में ऐतिहासिक जीत दर्ज की, परंतु संगठन जानता है कि सत्ता का नशा सबसे बड़ा शत्रु है। कार्यकर्ता पद पाकर निष्क्रिय हो जाते हैं और गुटबाजी में लग जाते हैं। इसलिए प्रदेश प्रभारी डॉ. महेंद्र सिंह ने कहा कि प्रशिक्षण सिर्फ सीखने का माध्यम नहीं, बल्कि उसका भाव कार्यकर्ताओं के आचरण और व्यवहार में परिलक्षित होना चाहिए। कुछ लोग देश में वंदेमातरम् के गायन से परहेज करते हैं, लेकिन यह नया भारत है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के दूरदर्शी नेतृत्व में विश्व के कई देशों में वंदेमातरम् का गायन हो रहा है।

2028 का लक्ष्य - सीटें नहीं, सर्वाधिक सीटें-संगठन ने 2028 विधानसभा का रोडमैप अभी से खींच दिया है। मुख्यमंत्री ने संबोधन में कहा कि भाजपा प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के बल पर वर्ष 2028 के विधानसभा चुनाव में सर्वाधिक सीटों पर विजय प्राप्त कर इतिहास रचेगी। प्रदेश संगठन ने जिस गंभीरता और प्रभावी ढंग से प्रशिक्षण वर्ग का आयोजन किया है, वह निश्चित रूप से आने वाले वर्षों में संगठन को नई ऊंचाइयों तक ले जाएगा।यहां 'सर्वाधिक' शब्द महत्वपूर्ण है, यानी 2018 की 109 सीटें या 2023 की 163 सीटें नहीं, बल्कि 200 पार का लक्ष्य। इसके लिए बूथ स्तर तक माइक्रो मैनेजमेंट चाहिए। प्रशिक्षित कार्यकर्ता ही भाजपा की नीतियों और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व पर विश्वास का प्रमाण हैं, परंतु प्रशिक्षण कागज पर नहीं, आचरण में उतरे, यही असली चुनौती है।

पद का मतलब पावर नहीं, परफॉर्मेंस-प्रदेश अध्यक्ष हेमंत खंडेलवाल ने कहा कि प्रशिक्षित कार्यकर्ता ही भाजपा की वास्तविक ताकत हैं। प्रशिक्षण हमारी पार्टी की सतत चलने वाली कार्यप्रणाली का महत्वपूर्ण अंग है। मध्यप्रदेश के सभी जिलों में प्रत्येक दो माह में नियमित रूप से कोर कमेटी की बैठकें आयोजित की जा रही हैं। आगामी जुलाई माह में प्रस्तावित कोर कमेटी बैठकों में प्रशिक्षण वर्गों की विस्तृत समीक्षा तथा उन्हें अधिक प्रभावी और परिणामकारी बनाने के सुझावों पर विशेष चर्चा की जाएगी। संदेश साफ है कि पद परिवार, वंश या विशेषाधिकार नहीं, बल्कि परिश्रम, समर्पण और संगठन के प्रति निष्ठा से प्राप्त होता है। भाजपा अध्यक्ष ने कहा कि प्रशिक्षण को जब हम जीवन, व्यवहार और कार्यशैली में उतारेंगे, तभी उसका वास्तविक लाभ मिलेगा।

गुटबाजी पर लगाम - मैं नहीं, हम चलेगा-समीक्षा बैठक में एक और बड़ी बात निकलकर आई कि गुटबाजी बर्दाश्त नहीं होगी। मुख्यमंत्री ने कहा कि हमें इस बात का ध्यान रखना होगा कि कार्यकर्ताओं को पद दिए गए हैं तो अब उन्हें काम दिखाना होगा और सभी का लक्ष्य पार्टी को मजबूत बनाना तथा प्रदेश में आने वाले समय में प्रस्तावित चुनाव होना चाहिए।

दरअसल, जीत के बाद संगठन में शिथिलता आ जाती है। मंडल अध्यक्ष और जिला अध्यक्ष पद पाकर 'साहब' बन जाते हैं। बूथ समितियां कागजों में सिमट जाती हैं और जनता से दूरी बढ़ जाती है। विपक्ष इसी कमजोरी का फायदा उठाता है। इसलिए संगठन ने रियल टाइम मॉनिटरिंग का फैसला किया है। हर दो माह में कोर कमेटी की बैठक और हर तिमाही प्रशिक्षण का फीडबैक, यानी जवाबदेही तय।

2026 से 2028 तक का एजेंडा-प्रदेश महामंत्री भगवानदास सबनानी ने कहा कि महाअभियान 2026 के प्रशिक्षण कार्यक्रमों के तहत मध्य क्षेत्र के क्षेत्रीय प्रभारी के.सी. पटेल ने कहा कि मध्यप्रदेश का संगठन मंडल और जिला प्रशिक्षण वर्ग में पार्टी के शीर्ष नेतृत्व की अपेक्षाओं पर खरा उतरा है। शत-प्रतिशत मंडल प्रशिक्षण वर्ग संपन्न होना मध्यप्रदेश पार्टी संगठन की बड़ी उपलब्धि है।

बैठक में पार्टी की प्रदेश उपाध्यक्ष डॉ. नंदिता पाठक, प्रदेश महामंत्री सुमेर सिंह सोलंकी, प्रदेश मंत्री रजनीश सिंह, प्रशिक्षण महाअभियान के प्रदेश संयोजक विजय दुबे एवं डॉ. अभय यादव मंचासीन रहे। अब आगे का एजेंडा स्पष्ट है-पहला, बूथ जीतो, चुनाव जीतो का फॉर्मूला। हर बूथ पर 10 युवा, 10 महिलाएं और 10 सोशल मीडिया योद्धा। दूसरा, लाभार्थी संपर्क। केंद्र और राज्य सरकार की योजनाओं के प्रत्येक लाभार्थी से व्यक्तिगत संपर्क। तीसरा, नैरेटिव पर कब्जा। विपक्ष के दुष्प्रचार का तथ्यों से जवाब। चौथा, नए मतदाताओं पर फोकस। 2028 तक 18 वर्ष के होने वाले एक करोड़ युवाओं को भाजपा से जोड़ना।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

आस्था और पर्यटन की भीड़ में दम तोड़ते पहाड़ ...

हिमालय की सांसें थम रही हैं

पहाड़ बुलाते हैं, पर अब वे कराह भी रहे हैं। मैदानों की तपती धरती और बढ़ती गर्मी से बचने के लिए उमड़ती बेतहाशा भीड़ आज पूरे हिमालयी तंत्र के लिए खतरे की घंटी बन चुकी है। रोहतांग दर्रे से मंडी तक घंटों का जाम, शिमला और मसूरी की सड़कों पर लाखों वाहन तथा नैनीताल और मनाली की झीलें प्लास्टिक से पट चुकी हैं। यह पर्यटन नहीं, पहाड़ों पर आबादी का आक्रमण है। साथ ही आस्था के नाम पर चारधाम यात्रा ने भी सारे रिकॉर्ड तोड़ दिए हैं। नतीजा यह है कि पहाड़ों की स्वच्छ हवा प्रदूषित हो रही है, नदियां सिकुड़ रही हैं और जमीन दरक रही है। सरकारी तंत्र की अव्यवस्था और कुप्रबंधन ने हालात को बद से बदतर कर दिया है।

आंकड़ों की चेतावनी - क्षमता से पार, व्यवस्था से बाहर-सरकारी आंकड़े डराते हैं। 5 जून तक केदारनाथ में 12 लाख और बद्रीनाथ में 11 लाख से अधिक यात्री पहुंच चुके हैं। कैंची धाम से लेकर हेमकुंड साहिब तक हर जगह लंबा जाम और अव्यवस्था आम बात है। जोशीमठ में केवल एक महीने में टनों प्लास्टिक कचरा निकला, जिसमें अधिकांश पानी की बोतलें थीं। विशेषज्ञ वर्षों से आगाह कर रहे हैं कि नैनीताल, मसूरी और शिमला अपनी भार वहन क्षमता पार कर चुके हैं। मनाली में पिछले तीन दशकों में सीमेंट आधारित निर्माण 5 प्रतिशत से बढ़कर 25 प्रतिशत से अधिक हो गया है। नीति आयोग और गोविंद बल्लभ पंत राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण संस्थान की रिपोर्टें साफ कहती हैं कि अनियंत्रित पर्यटन और जंगलों का विनाश हिमालयी पारिस्थितिकी तंत्र को बर्बाद कर रहा है, परंतु सुन कौन रहा है।

तीर्थ से टूरिज्म तक - आस्था का बाजारीकरण-चारधाम यात्रा कभी तप, त्याग और प्रकृति से जुड़ाव का नाम थी। आज वह हेलीकॉप्टर पैकेज, वीआईपी दर्शन और लग्जरी कैंप में बदल गई है। केदारनाथ में बढ़ती हवाई सेवाएं कार्बन उत्सर्जन और ध्वनि प्रदूषण का नया कारण बन गई हैं। श्रद्धालु कम, रील बनाने वाले पर्यटक ज्यादा दिखते हैं। प्रतिबंधित क्षेत्रों में सेल्फी, नदियों में प्लास्टिक और डीजे की धुन पर नाचना - यह कैसी आस्था है? ऑनलाइन पंजीकरण की व्यवस्था है, परंतु स्लॉट से तीन गुना भीड़ पहुंच जाती है। प्रशासन बैरिकेड लगाकर अपनी जिम्मेदारी पूरी मान लेता है। भीड़ प्रबंधन के नाम पर केवल लाठी और धक्का है। न पानी, न शौचालय और न ही पर्याप्त चिकित्सा सुविधा। आपदा आई तो सब भगवान भरोसे।

विकास या विनाश - कंक्रीट के जंगल उगते पहाड़-सरकार ऑल वेदर रोड, रोपवे और सुरंगों को विकास बता रही है, परंतु विकास की कीमत कौन चुका रहा है? सड़क चौड़ी हो रही है, पर नालियां बंद हैं। होटल हर पहाड़ी पर उग आए हैं, पर सीवेज सीधे नदियों में गिर रहा है। 2013 की केदारनाथ आपदा और 2023 का जोशीमठ भू-धंसाव हम भूल चुके हैं। पहाड़ों में निर्माण के लिए न भूगर्भीय सर्वे की चिंता है और न पर्यावरणीय मंजूरी की। बस टेंडर पास करो और पहाड़ काट दो। नतीजा भूस्खलन, बादल फटना और अचानक बाढ़ जैसी घटनाएं आम हो गई हैं। सरकारी तंत्र मूकदर्शक बना हुआ है। कुप्रबंधन का आलम यह है कि एक पुल बनने में 10 साल लगते हैं, पर टूटने में 10 मिनट।

स्थानीय पर मार - पर्यटन का खोखला अर्थशास्त्र-इस बेतहाशा भीड़ का सबसे बुरा असर स्थानीय लोगों पर पड़ रहा है। शिमला में आम आदमी को सप्ताह में दो दिन पानी मिलता है, पर पांच सितारा होटलों के स्विमिंग पूल लबालब रहते हैं। सेब के बाग काटकर कॉटेज बनाए जा रहे हैं। युवा पलायन कर रहे हैं, क्योंकि पर्यटन से केवल तीन महीने की मौसमी मजदूरी मिलती है। आपदा में सबसे पहले स्थानीय लोगों के घर गिरते हैं। पर्यटक को हेलीकॉप्टर से बचा लिया जाता है, पर पहाड़ी को राहत के लिए हफ्तों इंतजार करना पड़ता है। पर्यटन से कमाई होटल मालिकों और टूर ऑपरेटरों की होती है, जबकि कचरा, जाम और महंगाई का बोझ स्थानीय लोग उठाते हैं।

बचाने का रास्ता - रोक नहीं, नियमन चाहिए-हमें समझना होगा कि पहाड़ों की गोद असीमित नहीं है। तीर्थयात्रा और पर्यटन का उद्देश्य प्रकृति का दोहन नहीं, संरक्षण होना चाहिए। इसके लिए पांच कदम तुरंत उठाने होंगे। पहला, कैरिंग कैपेसिटी कानून - वैज्ञानिक तरीके से हर शहर और हर धाम की दैनिक यात्री सीमा तय हो और उससे एक भी व्यक्ति अधिक न जाए। ऑनलाइन स्लॉट समाप्त होने पर 'हाउसफुल' का बोर्ड लगे। दूसरा, हिमालयन ईको टैक्स - हर पर्यटक से 200 रुपये प्रतिदिन लिया जाए। यह राशि सीधे ग्राम पंचायतों को मिले, जो कचरा प्रबंधन और जंगल संरक्षण पर खर्च हो। तीसरा, निर्माण पर पांच वर्ष का मोरेटोरियम - कोई नया होटल या रिसॉर्ट नहीं, केवल स्थानीय पत्थर और लकड़ी के पारंपरिक होम-स्टे को अनुमति मिले। चौथा, यात्रा का डी-कंजेशन - मई-जून की भीड़ को अक्टूबर-नवंबर और फरवरी-मार्च में स्थानांतरित किया जाए तथा शीतकालीन चारधाम यात्रा को बढ़ावा दिया जाए। पांचवां, स्थानीय लोगों को मालिक बनाया जाए - पर्यटन नीति में पंचायतों को 50 प्रतिशत हिस्सेदारी और वीटो पावर मिले।

पहाड़ बचेंगे तभी तीर्थ बचेंगे। हिमालय भारत का वॉटर टावर और क्लाइमेट शील्ड है। गंगा और यमुना यहीं से निकलती हैं। अगर पहाड़ दरके तो मैदानों के करोड़ों लोगों की प्यास और आस्था दोनों खतरे में पड़ जाएंगी। आस्था का सम्मान तभी सार्थक होगा, जब श्रद्धालुओं की सुरक्षा और पहाड़ की सेहत दोनों प्राथमिकता बनें।

आधुनिक तकनीक, ऑनलाइन स्लॉट प्रणाली, ड्रोन से निगरानी और आपदा प्रबंधन तंत्र को मजबूत करना होगा। परंतु सबसे जरूरी है नियत। सरकार को समझना होगा कि भीड़ जुटाना उपलब्धि नहीं, उसे सुरक्षित वापस भेजना ही सुशासन है। वरना वह दिन दूर नहीं जब हिमालय खुद एक बोर्ड लगा देगा - 'प्रवेश निषेध, इंसानों के लिए खतरा।' तब न चारधाम रहेगा, न शिमला और मसूरी। बचेगा सिर्फ पछतावा, क्योंकि पहाड़ बोल नहीं सकते, पर जब टूटते हैं तो पूरी सभ्यता हिला देते हैं।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)